

मैसर्स आत्मा राम प्रोपर्टीज (प्राइवेट) लिमिटेड

बनाम

मैसर्स फ़ैडरल मोटर्स प्राइवेट लिमिटेड

10 दिसम्बर, 2004

(आर.सी. लाहोटी, मुख्य न्यायाधिपति एवं जी.पी. माथुर न्यायाधिपति)

देहली किराया नियंत्रण अधिनियम 1958 धारा 14(1)(b) एवं धारा
38 सी.पी.सी. 1908 आदेश 41 नियम 5

गैर आवासीय/वाणिज्यिक परिसर - बेदखली याचिका -किराया नियंत्रक द्वारा बेदखली का आदेश पारित किया गया -अपीलीय न्यायाधिकरण द्वारा रोक लगाते हुए निर्देश दिये गये कि किरायेदार को मासिक संविदात्मक किराये से अधिक कुछ राशि जमा करानी होगी -उच्च न्यायालय द्वारा निर्देश को अपास्त किया तथा निर्धारित किया कि किराया नियंत्रण न्यायाधिकरण की आदेश पर रोक लगाये जाने की शक्ति विवेकाधीन है, स्टे मांगने से पूर्व आवेदक को पर्याप्त कारण बताने होंगे। न्यायालय/ न्यायाधिकरण बेदखली के आदेश के निस्पादन को स्थगन आदेश के द्वारा रोक दिया है, इसलिए मकान मालिक को मुआवजा दिलाये जाने हेतु अंतिम डिक्री/आदेश के उचित निस्पादन के लिए सुरक्षा प्रदान करने सहित शर्तें लगा सकता है।

किरायेदारी का अवसान:-निर्णय किया गया कि पर्यवेक्षी मंच अथवा अपीलीय न्यायालय के समक्ष कार्यवाही की समाप्ति यदि डिक्री की पुष्टि या बेदखली के आदेश से होती है तो किरायेदारी का अवसान अधीनस्थ न्यायालय अथवा अधीनस्थ फोरम द्वारा पारित डिक्री या आदेश की दिनांक से प्रभावी होगा। किरायेदारी के अवसान की दिनांक को स्थगित नहीं किया जा सकता है। विलय का सिद्धांत यहाँ लागू नहीं होता है।

सम्पत्ति हस्तान्तरण अधिनियम 1982, धारा 111 पट्टा निर्धारण बनाम किरायेदारी -पर विवेचन किया गया।

शब्द और वाक्यांश

'प्रासंगिक तथ्य' -किराया नियंत्रण विधान के संदर्भ में इसका अर्थ।

अपीलकर्ता-मकान मालिक ने उप किरायेदारी के आधार पर प्रत्यर्थी-किरायेदार के विरुद्ध बेदखली की याचिका दायर की। किराया नियंत्रक द्वारा दावे को डिक्री किया गया, अपील पर किराया नियंत्रण अधिकरण के द्वारा बेदखली आदेश को इस शर्त के साथ स्थगित किया कि अपील के निस्तारण तक प्रत्यर्थी न्यायालय में 15,000 रुपये मासिक संविदात्मक किराये से अधिक की राशि जमा करायेगा। प्रत्यर्थी के द्वारा आदेश को चुनौती दी गयी। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने उक्त आदेश में लगायी गयी शर्त को खारिज कर दिया। इसलिए वर्तमान अपील समक्ष है।

अपीलार्थी ने तर्क प्रस्तुत किया कि यदि किरायेदार के द्वारा परिसर के उपयोग व कब्जे को बनाये रखने के लिए डिक्री या बेदखली के आदेश के विरुद्ध अपील या पुनरीक्षण याचिका दायर की गयी है तो उसे मकान मालिक को ऐसी राशि का भुगतान क्षतिपूर्ति के रूप में करने के लिए तैयार रहना चाहिए, जो राशि मकान मालिक परिसर खाली होने की स्थिति में अर्जित करने में सक्षम होता; तथा यह कि अपीलीय न्यायालय स्थगन का आदेश पारित करते समय स्थगन का आदेश मांगने वाले अपीलार्थी को शर्तों के अधीन रखते हुए अपने विवेकाधिकार के तहत कार्य कर सकता है।

प्रत्यर्थी ने तर्क प्रस्तुत किया कि अपील के लम्बित रहने के दौरान किरायेदार अपीलार्थी को संविदात्मक किराये की राशि के अलावा उससे अधिक किसी भी राशि का भुगतान करने का निर्देश तब तक नहीं दिया जा सकता है जब तक कि बेदखली का आदेश अथवा डिक्री अंतिम रूप प्राप्त नहीं कर लेता है। चूंकि किरायेदार, किरायेदार ही रहेगा, सम्पत्ति पर गैर कानूनी कब्जा नहीं बन जायेगा।

अपील को अनुमति देते हुए न्यायालय ने

अभीनिर्धारित: 1.1 दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम में ऐसा कोई विशिष्ट प्रावधान नहीं है जो अधिकरण को यह शक्ति प्रदान करता है कि वह किराया नियंत्रक द्वारा पारित बेदखली के आदेश के निष्पादन पर रोक लगा सके। परन्तु धारा 38 उपधारा 3 अधिकरण को अपील की सुनवायी करते

समय सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के तहत न्यायालय में निहित सभी शक्तियाँ प्रदान करती है।

सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 41 के नियम 5 के प्रावधान के अनुसार अधिकरण को ऐसा स्थगन का आदेश पारित करने का अधिकार है। (849 बी सी)

1.2 यह निर्धारित तथ्य है कि केवल अपील को प्रस्तुत करना ऐसे किसी डिक्री या आदेश अथवा अधीनस्थ न्यायालय की कार्यवाहियों पर स्वतः रोक के रूप में कार्य नहीं करता है, जिसके विरुद्ध अपील की गयी है। किसी भी कार्यवाही या डिक्री या आदेश के निष्पादन के विरुद्ध स्थगन आदेश प्राप्त किये जाने की प्रार्थना अपील में विशेष रूप से अपीलिय न्यायालय के समक्ष की जानी चाहिए तथा न्यायालय के पास उक्त स्थगन को स्वीकार या अस्वीकार करने का विवेकाधिकार प्राप्त है। सी.पी.सी. के आदेश 41 नियम 5 में इंगित मार्गदर्शक कारक के अनुसार अपीलार्थी के पक्ष में स्थगन आदेश को पारित किये जाने हेतु उचित या पर्याप्त कारण उपलब्ध होने चाहिए। (850 बी.सी)

1.3 सी.पी.सी. के आदेश 41 नियम 5 के उपनियम 3 (a) के अनुसार कब्जाधारी पक्ष की अपील लम्बित रहने के दौरान विस्थापन -सामान्यतः आदेश के निष्पादन पर रोक लगाने के लिए आवेदन करने

वाले पक्ष के लिए भारी नुकसान माना जाता है। उसी प्रावधान का
खण्ड(सी) यह

अनिवार्य बनाता है कि स्थगन आदेश पारित करने की पूर्ववर्ती शर्त के रूप में यह आवश्यक है कि आवेदक द्वारा डिक्री या आदेश की सम्यक पालना हेतु विनिर्दिष्ट प्रतिभूति स्थगन आदेश के पूर्व जमा करानी होगी। हालांकि यह एक मात्र शर्त नहीं है, जिसे अपीलीय न्यायालय लागू कर सकता है। (850 एफ.जी.)

1.4 स्थगन आदेश पारित करने की शक्ति विवेकाधीन है, जो अपीलीय न्यायालय को प्रदत्त क्षेत्राधिकार से आती है, जो वास्तव में न्यायसंगत है। केवल अपील को संस्थित करने मात्र से स्थगन आदेश प्राप्त करना अपीलार्थी का वैधानिक अधिकार नहीं है। इसी तरह एक अपीलीय न्यायालय को केवल इसी आधार पर स्थगन आदेश नहीं देना चाहिए कि एक अपील संस्थित की गयी है तथा आदेश को स्थगित किये जाने का आवेदन प्रस्तुत किया गया है। इसलिए स्थगन के आदेश के लिए एक आवेदक को साम्य की मांग के लिए साम्य के सिद्धांत की पालना करनी होगी। किसी भी मामले के तथ्यों व परिस्थितियों के आधार पर एक अपीलीय न्यायालय, स्थगन आदेश पारित करते समय, पक्षकारों पर ऐसी शर्त अधिरोपित कर सकता है, जिनके प्रवर्तन से अपील के अंत में सफलता प्राप्त करने वाले पक्षकार की न्याय की मांग को पूरा किया जा सके। सामान्य ज्ञान, मानवीय मामलों व घटनाओं के सामान्य ज्ञान से प्राप्त न्यायिक अनुभवों तथा न्यायिक रूप से ध्यान देने योग्य तथ्यों व इन सब

के अतिरिक्त रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री -ये सभी तथ्य अदालतों द्वारा अपने विवेकाधिकार का प्रयोग कर आदेश पारित करते समय प्रासंगिक तथ्यों के रूप में उपयोगी जानकारी प्रदान करते हैं तथा पक्षकारों पर अधिरोपित की जाने योग्य शर्तों को तैयार करने में उपयोगी होते हैं।
(850-जी; 851-ए-बी; 851 एफ)

ओल्गा तेलीस व अन्य बनाम बाम्बे नगर निगम व अन्य (1985) 3
एस.सी.सी. 545

साउथ ईस्टर्न कोलफील्डस लिमिटेड बनाम एम.पी. राज्य व अन्य
(2003) 8 एस.सी.सी 648

2.1 सामान्य कानून के तहत तथा उन मामलों में जहाँ किरायेदारी केवल सम्पत्ति हस्तान्तरण अधिनियम 1882 के प्रावधानों द्वारा शाषित है, यदि एक बार सम्पत्ति हस्तान्तरण अधिनियम की धारा 111 के तहत पट्टों के निर्धारण द्वारा किरायेदारी समाप्त हो जाती है, तब भी किरायेदार का सम्पत्ति पर कब्जा बनाये रखने का अधिकार उस अवधि के लिए समाप्त हो जाता है, जिसके लिए वह परिसर पर कब्जा जारी रखता है, वह उक्त परिसर का उपयोग करने व कब्जा बनाये रखने के लिए मकान मालिक को उस दर से क्षतिपूर्ति का भुगतान करने हेतु उत्तरदायी होगा, जिस दर पर मकान मालिक उक्त किरायेदार द्वारा उक्त परिसर को खाली करने के पश्चात परिसर किरायेदारी पर देता।

श्याम शरण बनाम शौजी भाई व अन्य (1997) 4 एस.सी.सी. 393

श्रीमती चन्दर काली बाई व अन्य बनाम श्री जगदीशसिंह ठाकुर व
अन्य (1977) 4 एस.सी.सी. 402

कुन्हयमद व अन्य बनाम केरल राज्य व अन्य (2000)6 एस.सी.सी.
359 – विवेचित किया गया तथा भेद किया गया।

भगवानदास बनाम एमएसटी. कोकाबाई ए.आई.आर (1956) नागपुर
186-अनुमोदित

वासुदेव बनाम बालकिशन (2002) 2 एस.सी.सी. 50 – लागू नहीं
किया गया।

2.2 किसी बेदखली के डिक्री या आदेश से पीडित किरायेदार अपने अधिकार की रक्षा के लिए वरिष्ठ मंच के समक्ष जा सकता है, परन्तु कार्यवाही की समाप्ति पर तथा पहले से पारित बेदखली की डिक्री या आदेश के पुष्ट रहने पर, किरायेदारी अधीनस्थ मंच द्वारा पारित की गयी डिक्री की तारीख से ही समाप्त हो जायेगी। किराया नियंत्रण कानून द्वारा शाषित परिसरों के मामलों में विलय का सिद्धांत, जो कि किरायेदारी की तारीख को स्थगित रखने का प्रभाव रखता है, के अनुसार बेदखली की डिक्री की पुष्टि के आदेश की तारीख, किरायेदारी की समाप्ति की तारीख का निर्धारण होगा

ना कि बाद में किसी तारीख या स्तर, जिस पर वरिष्ठ मंच द्वारा डिक्री की पुष्टि का आदेश दिया गया है। (854-एच 855-ए-बी)

श्रीमती चन्दर काली बाई व अन्य बनाम श्री जगदीशसिंह ठाकुर व अन्य (1977) 4 एस.सी.सी. 402 – संदर्भित

3. बेदखली के आदेश से पीडित किरायेदार को आदेश की पालना कर परिसर खाली करना होगा। उसका अपील करने का अधिकार वैधानिक है, परन्तु उसके द्वारा स्थगन आदेश की प्रार्थना पर अपीलीय न्यायालय के द्वारा न्यास संगत विवेकाधिकार का प्रयोग करते हुए विचार किया जाता है। स्थगन का आदेश पारित करते समय अपीलीय न्यायालय को इस तथ्य को ध्यान में रखना होगा कि वह सफल मकान मालिक को डिक्री के फल से वंचित कर रहा है और बेदखली के आदेश को स्थगित कर रहा है। अपीलीय न्यायालय के लिए यह औचित्यपूर्ण होगा कि वह किरायेदार अपीलार्थी पर शर्तें अधिरोपित करे तथा अपीलार्थी को निर्देशित करे कि वह मकान मालिक को युक्तियुक्त राशि का भुगतान क्षतिपूर्ति के रूप में करे, जो किराये की संविदात्मक दर के समान होना आवश्यक नहीं है। किरायेदार को मुकदमेबाजी जीवित रखने से रोकने की आवश्यकता भी होती है, ताकि मकान मालिक के मुकदमें में सफल होने पर डिक्री के फल को लूटा नहीं जा सके। (855-ई-एफ)

मार्शल संस एण्ड कम्पनी (आई) लिमिटेड बनाम साही
ओरेट्रांस(प्राइवेट) लिमिटेड व अन्य (1999) 2 एस.सी.सी. 325

सिविल अपीलिय क्षेत्राधिकार – सिविल अपील संख्या 7988/2004

दिल्ली उच्च न्यायालय के दिनांक 12.02.2002 के निर्णय व आदेश
से -सी.एम. (एम) 280/2001

अपीलार्थी की ओर से -के राममूर्थी, एल.के गर्ग, श्रीराम जे थलपति
तथा बलराज दीवान।

प्रत्यर्थी की ओर से -श्री रंजीत कुमार, सुश्री अनु मोहला व डी.डी.
गुप्ता।

**न्यायालय का निर्णय इनके द्वारा दिया गया -आर.सी. लोहाटी मुख्य
न्यायाधिपति**

कनॉट सर्कस, नई दिल्ली में स्थित वादग्रस्त परिसर लगभग 1000
वर्ग फुट का गैर-आवासीय वाणिज्यिक परिसर है। परिसर अपीलकर्ता के
स्वामित्व में है और प्रतिवादी द्वारा मासिक किरायेदारी पर रु. 371.90 के
मासिक किराए पर रखा गया है। किरायेदारी वर्ष 1944 में शुरू हुई थी और
ऐसा प्रतीत होता है कि तब से किराया स्थिर बना हुआ है। यह स्वीकार्य
तथ्य है कि, दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम 1958, (इसके बाद संक्षेप
में 'अधिनियम' कहा जाएगा) के प्रावधान परिसर पर लागू होते हैं।

वर्ष 1992 में किसी समय, अपीलकर्ता ने अधिनियम की धारा 14 की उप-धारा (1) के खंड (बी) के तहत उपलब्ध आधार पर प्रत्यर्थी को बेदखल करने की कार्यवाही शुरू की, जिसमें अभिकथन किया गया कि प्रत्यर्थी ने अवैध रूप से परिसर को मैसर्स जय वी ट्रेडिंग कम्पनी को उप किरायेदारी पर दे दिया था और उप-किरायेदार उक्त परिसर में अपना शोरूम चला रहा था। दिनांक 19.3.2002 के आदेश के तहत, अतिरिक्त किराया नियंत्रक, दिल्ली ने तय किया कि बेदखली के लिए आधार बनता है और प्रतिवादी को बेदखल करने का आदेश दिया। प्रत्यर्थी ने अधिनियम की धारा 38 के तहत अपील दायर की। किराया नियंत्रण अधिकरण ने दिनांक 12.4.2001 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थी की बेदखली पर रोक लगाने का निर्देश इस शर्त के अधीन दिया कि प्रत्यर्थी को संविदात्मक किराए के अतिरिक्त प्रति माह 15,000/-रुपये अदालत में जमा कराना होगा, जो अपीलकर्ता को सीधे भुगतान किया जायेगा। जमा करायी जाने वाली राशि अपीलकर्ता के नाम पर नकद या सावधि जमा के माध्यम से करने की अनुमति दी गई थी और अदालत के पास रखने का निर्देश दिया गया था और अपील पर अंतिम निर्णय होने तक किसी भी पक्ष द्वारा आहरित करने की अनुमति नहीं दी गई थी। प्रत्यर्थी ने यह दलील देते हुए कि कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान प्रत्यर्थी को किसी भी स्तर पर मकान मालिक को भुगतान करने या निविदा देने या अदालत में किराए की संविदात्मक दर से अधिक कोई राशि जमा करने का निर्देश नहीं दिया जा सकता था, संविधान के

अनुच्छेद 227 के तहत एक याचिका दायर की, जिसमें अधिकरण द्वारा प्रति माह 15,000 रुपये जमा करने की शर्त लगाई गई है। आदेश दिनांक 12.2.2002 द्वारा, जिसे यहां लागू किया गया है, उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने याचिका को स्वीकार कर लिया है और अधिकरण द्वारा लगाई गई उक्त शर्त को रद्द कर दिया है। उच्च न्यायालय के आदेश का प्रभाव यह है कि अधिकरण के समक्ष अपील के लंबित रहने के दौरान प्रत्यर्थी किराए की संविदात्मक दर के बराबर राशि के भुगतान के अधीन परिसर पर कब्जा बनाए रखेगा। व्यथित होकर मकान मालिक (अपीलकर्ता) ने विशेष अनुमति द्वारा यह अपील दायर की है।

आमतौर पर यह न्यायालय विवेकाधीन आदेशों में हस्तक्षेप नहीं करता है, विशेषकर तब जब वे उच्च न्यायालय या अधीनस्थ न्यायालयों/अधिकरणों द्वारा पारित अंतरिम प्रकृति के हों। हालाँकि, यह अपील बार-बार पुनरावृत्ति का मुद्दा उठाती है और इसलिए, हमने दोनों पक्षों के विद्वान वकील को विस्तार से सुना है। मकान मालिक-किरायेदार मुकदमेबाजी अदालतों और अधिकरणों में लंबित मुकदमों का एक बड़ा हिस्सा है। मुकदमेबाजी अनुचित समय तक चलती है और परिसर के कब्जे वाले किरायेदार अपील या संशोधन दायर करने का कोई भी अवसर नहीं चूकते हैं, जब तक कि वे मुकदमेबाजी के जीवन को बनाए रखने और परिसर पर कब्जा जारी रखने का जोखिम उठा सकते हैं। यदि प्रत्यर्थी के

विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा उठाई गई दलील को स्वीकार कर लिया जाए, तो किरायेदार, अंत में परिसर का कब्जा खोने के बावजूद कुछ भी नहीं खोता है, बल्कि लाभ प्राप्त करता है, क्योंकि उसने परिसर के उपयोग और कब्जे का आनंद लिया है तथा परिसर से बहुत कुछ पाया है, यदि परिसर गैर-आवासीय प्रकृति का है, तो वह उसी दर से हर्जाने का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होगा, जिस दर पर वह किराया के रूप में अन्यथा भुगतान करता था और इसके अतिरिक्त एक छोटी सी कोस्ट की राशि, जो आमतौर पर नगण्य होती है, का भी भुगतान करेगा।

अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री के. राममूर्ति ने तर्क प्रस्तुत किया कि एक बार बेदखली की डिक्री या आदेश पारित हो जाने के बाद, किरायेदार बेदखल होने के लिए उत्तरदायी है और यदि वह अपील या पुनरीक्षण दायर करता है और परिसर के उपयोग और कब्जे को बनाए रखने का विकल्प चुनता है तो उसे मकान मालिक को उतनी राशि का भुगतान करके मुआवजा देने के लिए तैयार रहना चाहिए, जितनी मकान मालिक परिसर खाली होने की स्थिति में कमा सकता था और इसलिए, वरिष्ठ न्यायालय, स्थगन आदेश पारित करते हुए, अपने विवेकाधिकार का उपयोग करते हुए स्थगन आदेश की मांग करने वाले अपीलकर्ता पर शर्तें अधिरोपित कर अपने क्षेत्राधिकार का सही उपयोग करेगा। दूसरी ओर,

प्रत्यर्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री रंजीत कुमार द्वारा उच्च न्यायालय के आदेश के बचाव में कई दलीलें प्रस्तुत की गयीं।

किराया नियंत्रक द्वारा पारित बेदखली का आदेश अधिनियम की धारा 38 के तहत किराया नियंत्रण अधिकरण में अपील योग्य है। नियंत्रक द्वारा पारित बेदखली के आदेश के निष्पादन पर रोक लगाने के लिए अधिकरण को शक्ति प्रदान करने के लिए अधिनियम में कोई विशेष प्रावधान नहीं है, लेकिन एक अपील पर सुनवाई करते हुए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के तहत धारा 38 की उप-धारा (3) अधिकरण को न्यायालय में निहित सभी शक्तियां प्रदान करती है। उक्त प्रावधान अधिकरण को सिविल प्रक्रिया संहिता 1908 (इसके बाद संक्षेप में 'संहिता' के रूप में संदर्भित) के आदेश 41 के नियम 5 के संदर्भ में स्थगन आदेश पारित करने का अधिकार देता है। किसी भी पक्ष की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा इस स्थिति पर कोई विवाद नहीं किया गया।

संहिता के आदेश 41 के नियम 5 के उप-नियम (1) और (3) इस प्रकार पढ़ें:-

"नियम 5 अपीलीय न्यायालय द्वारा रोका जाना -

(1) अपील का प्रभाव जिस डिक्री या आदेश की अपील की गयी है, उसके अधीन कार्यवाहियों को रोकना नहीं होगा, किन्तु यदि अपीलीय

न्यायालय आदेश दे तो कार्यवाहियाँ रोकी जा सकेंगी। केवल इस कारण से कि डिक्री की अपील की गयी है, डिक्री का निष्पादन नहीं हो जायेगा। किन्तु अपीलीय न्यायालय ऐसी डिक्री के निष्पादन को रोकने का आदेश पर्याप्त हेतुकों के आधार पर दे सकेगा।

(3) निष्पादन रोकने के लिए कोई भी आदेश उप-नियम (1) या उप-नियम (2) के अधीन तब तक नहीं किया जायेगा, जब तक कि उसे देने वाले न्यायालय का यह समाधान नहीं हो जाता है कि -

(क) यदि आदेश ना किया गया तो परिणाम यह हो सकता है कि निष्पादन के रोके जाने का आवेदन करने वाले पक्षकार को सारवान हानि हो,

(ख) आवेदन अयुक्तियुक्त विलम्ब के बिना किया गया है, तथा

(ग) आवेदक ने ऐसी डिक्री या आदेश के सम्यक रूप से पालन के लिए जो अंत में उसके लिए आबद्धकर हो, प्रतिभूति दे दी है।

यह सुस्थापित तथ्य है कि केवल अपील दायर करने से न तो उस डिक्री या आदेश पर रोक लगती है, जिसके खिलाफ अपील की गई है और ना ही निचली अदालत में चल रही कार्यवाही पर रोक लगती है। कार्यवाही पर रोक लगाने या डिक्री या आदेश के निष्पादन पर रोक लगाये जाने की प्रार्थना विशेष रूप से अपीलीय न्यायालय में की जानी चाहिए और अपीलीय

न्यायालय के पास रोक लगाने का आदेश देने या उसे अस्वीकार करने का विवेकाधिकार है। उपरोक्त नियम 5 में दर्शाया गया एकमात्र मार्गदर्शक कारक यह है कि अपीलार्थी के पक्ष में पर्याप्त कारण मौजूद हैं, जिसकी उपलब्धता पर अपीलीय न्यायालय स्थगन आदेश पारित करने के लिए तत्पर होगा। अनुभव से पता चलता है कि अपीलीय न्यायालय के समक्ष मुख्य विचारणीय बिन्दु सामान्यतः यह होता है कि अपीलीय न्यायालय द्वारा सुनवाई के लिए अपील पर विचार किए जाने के बावजूद, अपील स्वीकार किए जाने की स्थिति में अपीलार्थी को उसकी सफलता के फल से वंचित नहीं किया जा सकता है। इस विचारणीय बिन्दु को अन्य विचारणीय तथ्यों के साथ तौला जाता है: निचली न्यायालय से सफल होने वाले एक पक्ष को डिफ्री या आदेश के फल से केवल इसलिए वंचित क्यों किया जाना चाहिए, क्योंकि पराजित पक्ष ने एक वरिष्ठ मंच के अधिकार क्षेत्र का आह्वान करना चुना है, फिर भी स्थगन देने की प्रार्थना पर विचार कर रही न्यायालय स्वयं से यह सवाल पूछती है: डिफ्री की तारीख पर अस्तित्व में रही यथास्थिति या स्थगन के लिए आवेदन करने की तारीख पर प्रचलित यथास्थिति को बरकरार रखते हुए स्थगन जारी किये जाने की अनुमति क्यों ना दी जाये? न कि यह सवाल कि स्थगन क्यों दिया जाना चाहिए।

कब्जाधारी पक्ष की अपील के लंबित रहने के दौरान बेदखली को आम तौर पर नियम 5 के उप-नियम (3) के खंड (क) के अर्थ के तहत

निष्पादन पर रोक के लिए आवेदन करने वाली पक्षकार के लिए 'सारवान हानि' माना जाता है। संहिता का आदेश 41. उसी प्रावधान का खंड (सी) डिक्री या आदेश के उचित निष्पादन के लिए प्रतिभूति को अनिवार्य करता है, जिसे अंततः आवेदक द्वारा स्थगन आदेश प्राप्त करने से पूर्ववर्ती शर्त के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। हालाँकि, यह एकमात्र शर्त नहीं है जो अपीलीय न्यायालय लगा सकता है। स्थगन देने की विवेकाधीन शक्ति अपीलीय न्यायालय को प्रदत्त अधिकार क्षेत्र से आती है, जो प्रकृति में न्यायसंगत है। केवल अपील दायर करके स्थगन आदेश सुरक्षित करना अपीलकर्ता को प्रदत्त वैधानिक अधिकार नहीं है। इसी तरह, किसी अपीलीय न्यायालय को केवल इसलिए स्थगन आदेश देने के लिए नियुक्त नहीं किया गया है क्योंकि अपील दायर की गई है और स्थगन आदेश के लिए आवेदन किया गया है। इसलिए, स्थगन आदेश के लिए एक आवेदक को इक्विटी की मांग के लिए इक्विटी करना होगा। किसी दिए गए मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, अपीलीय अदालत, स्थगन आदेश पारित करते समय, पक्षकारों पर ऐसी शर्त अधिरोपित कर सकती है, जिनके प्रवर्तन से अपील के अंत में सफलता प्राप्त करने वाले पक्षकार की न्याय की मांग पूरी हो जाए। साउथ ईस्टर्न कोलफील्ड्स लिमिटेड बनाम मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य, (2003) 8 एससीसी 648 में इस न्यायालय ने कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान प्रभावी, प्रतिभूति प्रदान करने के उद्देश्य से मुकदमे के किसी भी पक्षकार के पक्ष में दिए गए अंतरिम आदेशों

से निपटते हुए माना है कि ऐसे अंतरिम चरण में पारित अंतरिम आदेश, अपने पक्ष में अंतरिम आदेश हासिल करने में सफल पक्षकार के विरुद्ध अंतिम निर्णय होने की स्थिति में पलट दिए जाते हैं; और अंत में सफल पक्षकार द्वारा मुआवजे की मांग करना और उसे उसी स्थिति में रखा जाना उचित होगा, जिसमें वह होता यदि उसके खिलाफ अंतरिम आदेश पारित नहीं किया गया होता। सफल पक्षकार (ए) उच्च न्यायालय के अंतरिम आदेश के तहत विपरीत पक्ष द्वारा अर्जित लाभ को दिये जाने की या (बी) जो उसने खोया है, उसके लिए मुआवजे की मांग कर सकता है, और ऐसी राहत देना न्यायालय का अंतर्निहित क्षेत्राधिकार है। हमारी राय में, सी.पी.सी. के आदेश 41 नियम 5 के तहत स्थगन आदेश देते समय, अपीलीय अदालत के पास ऐसी शर्तों पर स्थगन आदेश मांगने वाले पक्ष को रखने का अधिकार क्षेत्र है, जो अपील के अंत में सफल पक्षकार को संबंधित कार्यवाहियों के संबंध में उचित रूप से मुआवजा देगा। इस प्रकार, उदाहरण के लिए, हालांकि धन के भुगतान की डिक्री पर आम तौर पर अपीलीय न्यायालय द्वारा रोक नहीं लगाई जाती है, फिर भी, यदि न्यायालय किसी असाधारण मामले में रोक लगाने के लिए अपने अधिकार क्षेत्र का उपयोग करता है तो यह अपीलार्थी को स्थगन आदेश में अधिरोपित पूर्ववर्ती शर्त के अनुसार ब्याज के साथ डिक्री राशि का भुगतान करने का निर्देश दे सकता है। हालाँकि अपील के तहत डिक्री निर्णय-देनदार द्वारा डिक्री-धारक को ब्याज के भुगतान का प्रावधान नहीं करती है।

सामान्य ज्ञान, मानवीय मामलों व घटनाओं के सामान्य ज्ञान से प्राप्त न्यायिक अनुभवों तथा न्यायिक रूप से ध्यान देने योग्य तथ्यों व इन सब के अतिरिक्त रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री -ये सभी तथ्य अदालतों द्वारा अपने विवेकाधिकार का प्रयोग कर आदेश पारित करते समय प्रासंगिक तथ्यों के रूप में उपयोगी जानकारी प्रदान करते हैं तथा पक्षकारों पर अधिरोपित की जाने योग्य शर्तों को तैयार करने में उपयोगी होते हैं। ओल्गा तेलिस और अन्य बनाम बॉम्बे नगर निगम और अन्य (1985) 3 एससीसी 545 के मामले में संविधान पीठ के द्वारा दिये गये निर्णय में मुख्य न्यायाधिपति चन्द्रचूड के शब्दों में -"सामान्य ज्ञान जो जीवन के अनुभवों का एक समूह है, अक्सर युद्धरत वादियों द्वारा प्रस्तुत प्रतिद्वंद्वी तथ्यों की तुलना में अधिक भरोसेमंद होता है"।

प्रत्यर्थी के विद्वान वरिष्ठ वकील श्री रंजीत कुमार ने तर्क प्रस्तुत किया कि अपील के लंबित रहने के दौरान किरायेदार-अपीलकर्ता को संविदात्मक किराए की राशि से अधिक किसी भी राशि का भुगतान करने के लिए निर्देशित नहीं किया जा सकता है जब तक कि डिक्री या बेदखली का आदेश अंतिम रूप से प्राप्त नहीं हो जाता है। क्योंकि किरायेदार द्वारा प्राप्त किराया नियंत्रण कानून की सुरक्षा के मद्देनजर, वह किरायेदार बना रहेगा और संपत्ति पर गैरकानूनी कब्जा करने वाला व्यक्ति नहीं बनेगा, जब तक कि डिक्री को उच्चतम मंच से अंतिम रूप नहीं मिल जाता है। श्रीमती

चंदर काली बाई एवं अन्य बनाम श्री जगदीश सिंह ठाकुर एवं अन्य, (1977) 4 एससीसी 402 व वाशु देव बनाम बालकिशन, (2002) 2 एससीसी 50 को प्रस्तुत कर निम्न दो मुद्दों को उठाया गया (i) किराया नियंत्रण कानून के संरक्षण का आनंद ले रहे परिसर के संबंध में, किरायेदारी कब समाप्त होती है; और (ii) किस समय तक किरायेदार संविदात्मक दर पर किराया देने के लिए उत्तरदायी है और वह किराए की संविदात्मक दर से परे किरायेदारी परिसर के उपयोग और कब्जे के लिए मकान मालिक को मुआवजे का भुगतान करने के लिए कब उत्तरदायी हो जाता है?

सामान्य कानून के तहत, और ऐसे मामलों में जहां किरायेदारी केवल संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम, 1882 के प्रावधानों द्वारा शासित होती है, एक बार संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम की धारा 111 के तहत पट्टे के निर्धारण से किरायेदारी समाप्त हो जाती है, तो किरायेदार का अधिकार किरायेदार का परिसर पर कब्जा जारी रखने का अधिकार समाप्त हो जाता है और उसके बाद किसी भी अवधि के लिए, जिसके लिए वह परिसर पर कब्जा जारी रखता है, वह उस दर पर उपयोग और कब्जे के लिए हर्जाना देने के लिए उत्तरदायी हो जाता है जिस दर पर मकान मालिक परिसर को किराए पर दे सकता था। किरायेदार द्वारा खाली किये जाने पर. चंदर काली बाई और

अन्य के मामले में। (सुप्रा) किरायेदारी परिसर मध्य प्रदेश राज्य में स्थित थे और एमपी आवास नियंत्रण अधिनियम, 1961 के प्रावधान लागू थे।

31 दिसंबर 1972 से किरायेदार पर संविदात्मक किरायेदारी समाप्त करने का नोटिस देने के बाद 8 मार्च 1973 को बेदखली का मुकदमा दायर किया गया था। मुकदमा विचारण न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था, लेकिन 11 अगस्त 1975 को पहली अपील में दावे को डिक्री किया गया। इनमें से एक किरायेदार-अपीलार्थी की ओर से इस न्यायालय में प्रस्तुत दलील यह थी कि संविदात्मक किरायेदारी की समाप्ति की तारीख से कोई क्षतिपूर्ति का आदेश नहीं दिया जा सकता है; क्षतिपूर्ति केवल उसी तारीख से दिया जा सकता है, जब बेदखली का आदेश पारित किया गया था। इस न्यायालय ने एम.पी. अधिनियम की धारा 2 (आई) में निहित किरायेदार की परिभाषा पर विचार किया, जिसमें "किरायेदारी की समाप्ति के बाद भी कब्जा जारी रखने वाला कोई भी व्यक्ति" शामिल है, लेकिन इसमें "कोई भी व्यक्ति जिसके खिलाफ कोई बेदखली आदेश या डिक्री पारित की गयी है, शामिल नहीं है। न्यायालय ने उक्त परिभाषा से सहमत होकर यह माना कि एक व्यक्ति जो अपनी संविदात्मक किरायेदारी की समाप्ति के बाद भी आवास पर कब्जा बनाए रखता है, वह एम.पी. अधिनियम के अर्थ के तहत किरायेदार है और ऐसी किरायेदारी की समाप्ति पर उसका कब्जा अनाधिकृत नहीं हो जाता जब तक कि बेदखली का डिक्री

पारित न हो जाए। हालाँकि, न्यायालय ने विशेष रूप से फैसला सुनाया कि डिक्री पारित होने के बाद भी कब्जा जारी रखने वाला किरायेदार आवास का अनाधिकृत कब्जाधारी हो जाता है। निष्कर्ष में न्यायालय ने माना कि किरायेदार 1 जनवरी 1973 से शुरू होकर 10 अगस्त 1975 को समाप्त होने वाली अवधि के लिए किसी भी क्षतिपूर्ति या मेस्ने लाभ का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं था, लेकिन वह 11 अगस्त 1975 से आवास को खाली करा कर कब्जा देने तक क्षतिपूर्ति या मेस्ने लाभ का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी होगा। आवास का खाली कब्जा अपने निर्णय के दौरान इस न्यायालय ने किकाभाई अब्दुल हुसैन बनाम कमलाकर, 1974 एम.पी.एल.जे. 485 में उच्च न्यायालय के निर्णय का उल्लेख किया, जिसमें मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने माना कि यदि कोई व्यक्ति संविदात्मक किरायेदारी की समाप्ति के बाद भी कब्जे में रहता है तो बेदखली के लिए डिक्री पारित होने पर वह समाप्ति की तारीख से आवास का अनाधिकृत कब्जाधारी बन जाता है। इस न्यायालय ने कहा कि मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने जो कहा वह "रिलेशन बैंक" के सिद्धांत के समान एक सिद्धांत प्रतीत होता है, इस तर्क पर कि कब्जे के लिए डिक्री पारित होने पर, किरायेदार का कब्जा संविदात्मक किरायेदारी की तारीख से अनाधिकृत कब्जा हो जाएगा ना कि डिक्री की तारीख से। एम.पी. अधिनियम के अन्तर्गत परिभाषित किरायेदार की परिभाषा के मद्देनजर किकाभाई अब्दुल हुसैन के मामले में निर्धारित कानून उनके समक्ष प्रकरण

पर लागू नहीं होता तथा किकाभाई अब्दुल हुसैन के मामले में उच्च न्यायालय के समक्ष विचार के लिए आये प्रावधान अलग थे।

प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा वाशुदेव (सुप्रा) के मामले पर भरोसा करना गलत है, क्योंकि उस मामले में न्यायालय किरायेदार के रोक के नियम से निपट रही थी, जिसमें यह माना गया था कि किरायेदार को शीर्षक पर विवाद करने से रोक दिया गया था। उसके मकान मालिक का जब तक किरायेदारी परिसर पर उसका कब्जा बना रहा और जब तक उसने मकान मालिक को दोबारा कब्जा नहीं दिला दिया।

श्याम शरण बनाम श्योजी भाई व अन्य (1977) 4 एस.सी.सी. 393 में इस न्यायालय ने इस सिद्धांत को यथावत रखा है कि किरायेदारी की समाप्ति के बाद किरायेदारी परिसर का कब्जा जारी रखने वाला किरायेदार एक अनाधिकृत और गलत कब्जाधारी है और क्षति या मेस्ने लाभ के लिए एक डिक्री ऐसे कब्जे की अवधि के लिए उस तारीख तक पारित की जा सकती है, जब तक वह मकान मालिक को खाली कब्जा सौंप देता है। अनुकूलता और अनुमोदन के साथ, हम नागपुर उच्च न्यायालय के एक निर्णय भगवानदास बनाम एमएसटी. कोकाबाई, ए.आई.आर. 1953 नागपुर 186 का उल्लेख कर सकते हैं। नागपुर उच्च न्यायालय के विद्वान मुख्य न्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया कि मकान मालिक और किरायेदार के रिश्ते को नियंत्रित करने वाले किराया नियंत्रण आदेश की इस सवाल को

निर्धारित करने के लिए कोई प्रासंगिकता नहीं है कि एक सफल मकान मालिक को सम्पत्ति के कब्जे व उपभोग से दूर रखने के लिए नुकसान का माप क्या होना चाहिए, जो वह किरायेदार से प्राप्त करता। किरायेदारी के निर्धारण के बाद, किरायेदार की स्थिति एक अतिचारी के समान होती है और वह यह दावा नहीं कर सकता है कि मकान मालिक को दिए जाने वाले नुकसान का निर्धारण किराया नियंत्रण आदेश के प्रावधानों के तहत देय किराए की दर से जोड़ा जाना चाहिए। यदि संपत्ति का वास्तविक मूल्य अर्जित किराए से अधिक है तो किरायेदार द्वारा संपत्ति के निरंतर उपयोग और कब्जे के लिए मुआवजे की राशि का आकलन उच्च मूल्य पर किया जा सकता है। हम स्वयं को नागपुर उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से सहमत पाते हैं।

कुन्हायमद और अन्य बनाम केरल राज्य एवं अन्य, (2000) 6 एससीसी 359 में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री रंजीत कुमार ने तर्क प्रस्तुत किया कि विचारण न्यायालय की डिक्री अपीलीय न्यायालय की डिक्री में विलीन हो जाती है और इसलिए, किरायेदार किरायेदार ही बना रहेगा और उच्चतम न्यायालय द्वारा डिक्री पारित होने तक (गैरकानूनी कब्जाधारी) नहीं बनेगा, क्योंकि डिक्री तभी अंतिम रूप लेगी जब कार्यवाही अंततः समाप्त हो जाएगी और फिर विचारण न्यायालय की डिक्री अपीलीय न्यायालय की डिक्री में विलय

हो जाएगी, वह तारीख जो केवल किरायेदार के कब्जे की प्रकृति का निर्धारण करने के लिए प्रासंगिक होगी। हम सहमत नहीं हैं।

कुन्हायमद और अन्य (सुप्रा) मामले में इस न्यायालय ने उपलब्ध सभी निर्णयों की विस्तृत विवेचना कर यह माना कि एक बार जब वरिष्ठ न्यायालय ने किसी भी तरह से उसके समक्ष मामले का निपटारा कर दिया है, जैसे कि अपील के तहत डिक्री या आदेश को अपास्त किया गया है या संशोधित किया गया है या बस पुष्टि की गई है, तो यह उच्च न्यायालय, अधिकरण या प्राधिकारी का डिक्री या आदेश है जो अंतिम, बाध्यकारी और ऑपरेटिव डिक्री या आदेश है, जिसमें न्यायालय, अधिकरण या नीचे के प्राधिकारी द्वारा पारित डिक्री या आदेश का विलय होता है। हालाँकि, इस न्यायालय ने यह भी कहा है कि विलय का सिद्धांत सार्वभौमिक या असीमित अनुप्रयोग का नहीं है। विलय के बावजूद वास्तविक तथ्य यह रहेगा कि यह डिक्री या आदेश, जिसके खिलाफ अपील की गई थी, जिसमें किरायेदारी को उस तारीख से समाप्त करने का निर्देश दिया गया था, जिस तारीख से किरायेदार किरायेदार नहीं रह गया था और किरायेदार का दायित्व था कि वह किरायेदारी परिसर के अस्तित्व में आ जाने पर कब्जा दे दे। हालांकि स्थगन आदेश के कारण इसे निलंबित रखा गया था।

इसलिए, हमारी राय है कि किरायेदार को बेदखली की डिक्री या आदेश का सामना करना पड़ा है, वह बेहतर फोरम के समक्ष अपनी लड़ाई

जारी रख सकता है, लेकिन कार्यवाही की समाप्ति पर और पहले पारित डिक्री या बेदखली के आदेश के रहने पर किरायेदारी निचले फोरम द्वारा पारित डिक्री की तिथि से समाप्त माना जायेगा। किराया नियंत्रण कानून द्वारा शासित परिसरों के मामले में, बेदखली की डिक्री की पुष्टि होने पर किरायेदारी की समाप्ति की तारीख का निर्धारण करेगी और किसी भी बाद के स्तर या तारीख पर वरिष्ठ मंच द्वारा पारित पुष्टि की डिक्री विलय के सिद्धांत के संदर्भ में किरायेदारी की समाप्ति की तारीख को स्थगित करने का प्रभाव नहीं रखेगी।

दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम 1958 में, 'किरायेदार' की परिभाषा धारा 2 के खंड (एल) में निहित है। किरायेदार में 'किरायेदारी की समाप्ति के बाद भी कब्जा जारी रखने वाला कोई भी व्यक्ति' शामिल है और इसमें 'कोई भी व्यक्ति जिसके खिलाफ बेदखली का आदेश या डिक्री किया गया है' शामिल नहीं है। यह परिभाषा चंद्र काली बाई एवं अन्य मामले(सुप्रा) में इस न्यायालय द्वारा निपटाई गई किरायेदार की परिभाषा के समान है। यहां किरायेदार-प्रत्यर्थी को 19.03.2001 को बेदखली के आदेश का सामना करना पड़ा, उसकी किरायेदारी उस आदेश की तारीख से समाप्त मानी जाएगी और वह एक अनाधिकृत कब्जाधारी बन जाएगा। इससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा अगर बेदखली का आदेश अपील या पुनरीक्षण विचारणीय था और बाद में वरिष्ठ मंच द्वारा इसकी पुष्टि की गई हो। विलय के सिद्धांत

के संदर्भ में किरायेदारी की समाप्ति की तारीख को स्थगित नहीं किया जाएगा।

इसके अलावा, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि अपीलीय न्यायालय को संहिता के आदेश 41 नियम 5 के तहत अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते समय किरायेदार-अपीलार्थी पर शर्तें अधिरोपित करने की शक्ति थी। बेदखली के आदेश का सामना करने वाले किरायेदार को इसका पालन करना होगा और परिसर खाली करना होगा। अपील का उनका अधिकार वैधानिक है लेकिन स्थगन देने की उनकी प्रार्थना पर अपीलीय न्यायालय के न्यायसंगत विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए निपटाया जाता है। स्थगन का आदेश देते समय अपीलीय न्यायालय को इस तथ्य के प्रति जागरूक रहना होगा कि वह सफल मकान मालिक को डिक्री के फल से वंचित कर रहा है और बेदखली के आदेश के निष्पादन को स्थगित कर रहा है। अपीलीय अदालत के पास किरायेदार-अपीलार्थी पर शर्त अधिरोपित करने और अपीलार्थी को मकान मालिक को उचित राशि का भुगतान करके मुआवजा देने का निर्देश देने का औचित्य है, जो जरूरी नहीं कि किराए की अनुबंध दर के समान हो। मार्शल संस एंड कंपनी (आई) लिमिटेड बनाम साही ओरेट्रांस (पी) लिमिटेड और अन्य, (1999) 2 एस.सी.सी. 325 में इस न्यायालय ने माना है कि एक बार कब्जे के लिए डिक्री पारित हो गई है और निष्पादन में देरी हो रही है, जिससे निर्णय-लेनदार डिक्री के फल से

वंचित हो जाता है, यह आवश्यक है न्यायालय को उचित आदेश पारित करने चाहिए ताकि उचित औसत लाभ जो कि बाजार किराए के बराबर हो सकता है, उस व्यक्ति द्वारा भुगतान किया जाए, जो संपत्ति पर कब्जा कर रहा है।

संक्षेप में, हमारे निष्कर्ष हैं:-

(1) अपीलीय न्यायालय के पास सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 41 के नियम 5 के तहत स्थगन आदेश पारित करते समय आवेदक पर ऐसी उचित शर्तें अधिरोपित करने का अधिकार क्षेत्र है, जो उसकी राय में डिक्री-धारक को स्थगन आदेश देने से डिक्री के निष्पादन में हुई देरी के कारण हुई हानि व अपील खारिज होने की स्थिति में उन कार्यवाहियों से संबंधित उचित रूप से मुआवजा देगा। कहने की आवश्यकता नहीं कि ऐसी शर्तें उचित होंगी;

(2) दिल्ली किराया नियंत्रण अधिनियम, 1958 के प्रावधानों द्वारा शासित परिसर के मामले में, अधिनियम की धारा 2 के खंड (एल) में निहित किरायेदार की परिभाषा के मद्देनजर, किरायेदारी केवल इसकी समाप्ति से समाप्त नहीं होती है, बल्कि सामान्य कानून के तहत; यह बेदखली के आदेश के पारित होने की तिथि के साथ समाप्त हो जाती है। किरायेदार परिसर के उपयोग और कब्जे के लिए उसी दर पर मेस्ने लाभ या मुआवजे का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी है, जिस दर पर मकान

मालिक किरायेदार द्वारा परिसर खाली कर दिये जाने पर किराए पर दे सकता था और किराया कमा सकता था। मकान मालिक डिक्री की तारीख से पहले की अवधि के लिए प्रभावी किराए की संविदात्मक दर से बाध्य नहीं है;

(3) विलय के सिद्धांत में किरायेदारी की समाप्ति की तारीख को केवल इसलिए स्थगित करने का प्रभाव नहीं पड़ता है, क्योंकि बेदखली का डिक्री बाद की तारीख में वरिष्ठ मंच द्वारा पारित डिक्री में विलय हो जाता है।

हस्तगत मामले में, यह ध्यान में रखना होगा कि किरायेदार 1944 से परिसर का किराया 371.90 रुपये का भुगतान कर रहा है। उस दिन से अचल संपत्ति का मूल्य और किराया दरें आसमान छू रही हैं। यह परिसर राजधानी दिल्ली के मध्य में प्रमुख व्यावसायिक इलाके में स्थित है। उच्च न्यायालय को यह बताया गया कि उसी मकान मालिक के 2000 वर्ग फुट के आसपास के परिसर को हाल ही में 3,50,000/-रुपये प्रति माह की दर पर किराए पर दिया गया है। किराया नियंत्रण अधिकरण ने अपील के लंबित रहने के दौरान किरायेदार को उपयोग और कब्जे के शुल्क के रूप में 15,000/-रुपये प्रति माह के भुगतान की शर्त लगाने का फैसला सही किया था। अधिकरण ने यह सुनिश्चित करने के लिए अतिरिक्त सावधानी बरती कि अपील का निर्णय होने तक राशि उसके पास जमा रहे ताकि अपील के

अंत में उसके द्वारा बनाई गई राय के अनुरूप अपीलीय न्यायालय द्वारा जमा राशि का भुगतान किया जा सके। अधिकरण द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण में कोई दोष नहीं पाया जा सकता है। उच्च न्यायालय ने एक गलत धारणा पर अधिकरण के आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप किया है कि किरायेदार द्वारा मकान मालिक को किराए की संविदात्मक दर से ऊपर किसी भी दर पर किसी भी राशि के भुगतान के लिए कोई निर्देश नहीं दिया जा सकता था। हम उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण का समर्थन नहीं कर सकते। हम रिकॉर्ड पर रख सकते हैं कि यह हमारे सामने किरायेदार-प्रत्यर्थी का मामला नहीं है, ना ही यह उच्च न्यायालय में था कि किराया नियंत्रण अधिकरण द्वारा मूल्यांकन की गई 15,000/-रुपये की राशि अनुचित या बहुत अधिक थी।

उपरोक्त कारणों से अपील स्वीकार की जाती है। उच्च न्यायालय के आदेश को अपास्त किया जाता है और अधिकरण के आदेश को उच्च न्यायालय और इस न्यायालय में हुए खर्च के साथ बहाल किया जाता है। हालाँकि, किरायेदार-प्रत्यर्थी को किराया नियंत्रण अधिकरण के आदेश के अनुरूप जमा कराने और बकाया चुकाने के लिए छह सप्ताह का समय दिया जाता है, जिसकी गणना आज से की जाती है।

अपील स्वीकार

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी शिवानी सिंह (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।